फफूँद लाए पृथ्वी पर बहार

माधव गाडगिल

कुछ अजीब लगता है न कि फफूँद और बहार? कितनी परस्पर विरोधाभासी बात है। किन्तु सच्चाई यही है कि जिन फफूँदों को हम तुच्छ समझते हैं उन्होंने ही ज़मीन के नीचे वनस्पतियों की जड़ों के साथ सहयोग का व्यापक जाल बुनकर भूतल पर जीवधारियों के नए युग की बुनियाद रखी है।

हर व्यक्ति के जीवन में, हर समाज के इतिहास में उन्नति और अवनति, सहयोग और संघर्ष, ऐसे उतार-चढ़ाव लगातार होते रहते हैं। इस प्रकार के सकारात्मक और नकारात्मक दौर जैव-विकास की यात्रा में भी देखे जाते हैं। जीवधारियों का पानी से निकलकर भूतल पर आना एक बढ़ते हुए सहयोग का उन्नत काल था। पौने चार अरब वर्ष पहले सागर की गहराइयों में जिस गन्ध-युक्त और ऑक्सीजन-रहित पानी में जीवन की शुरुआत हुई थी वह हमारे लिए पूरी तरह विषैला है। वहीं पर अरबों वर्ष तक जीवन फलता-फूलता रहा - सरल शरीर रचना वाले

सूक्ष्म बैक्टीरिया के रूप में।

इनमें से सायनोबैक्टीरिया* ने प्रकाश की ऊर्जा का उपयोग करते हुए जैविक उत्पादन शुरू किया। इस प्रक्रिया में पानी से ऑक्सीजन मुक्त होने लगी और उसकी मात्रा बढ़ती गई। ऑक्सीजन के तीन परमाणुओं से बने ओज़ोन के अणु सूर्य के प्रकाश में उपस्थित पराबैंगनी किरणों को सोखने लगे। इसके परिणामस्वरूप धीरे-धीरे ऐसी परिस्थिति बन गई जिसमें उथले पानी में और ज़मीन पर जीवन इन घातक किरणों से सुरक्षित रह सका।

ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ने के साथ अधिक जोशीले जीवधारी सामने आए। ये सारी घटनाएँ हुईं तो समुद्र के पानी में, जो जीवन के लिए बहुत अधिक अनुकूल होता है, किन्तु जीवजगत तो लगातार अपने पाँव पसारता रहता है। इसी का परिणाम यह हुआ कि जैव-विकास के अगले चरण में, आज से लगभग 45 करोड़ वर्ष पहले जीवजगत पानी से बाहर झाँकने लगा।

समुद्र से ज़मीन पर आए जीव

इस नए युग में जीवधारियों का सामना तमाम चुनौतियों से हुआ। समुद्र में उतराते सायनोबैक्टीरिया और एककोशिकीय शैवालों के लिए प्रकाश की ऊर्जा के उपयोग से जैविक उत्पादन हेतु पानी में से पोषक खनिज सोख लेना आसान था और उन्हें गुरुत्वाकर्षण का भय भी नहीं था। किन्तु ज़मीन पर वनस्पतियों को पानी के सहारे के बिना खड़े रहना था और प्रकाश की ऊर्जा का उपयोग करने के साथ ही मिट्टी में से पोषक तत्वों को सोखना था। इसके अलावा, अन्य वनस्पतियों की छाया से बचते हुए खड़े होने के लिए मज़बूत शरीर चाहिए थे। पत्तियों के माध्यम से जैविक उत्पादन करने के लिए मिट्टी से सोखे हुए पानी और पोषक खनिजों को ज़मीन से काफी अधिक ऊँचाई तक पहुँचाना पड़ता था। फिर पत्तियों में बनी शर्करा को पूरे शरीर में पहुँचाना भी ज़रूरी था।

शर्करा के अणुओं को गूँथकर बनाए गए सेल्यूलोज़ और हेमीसेल्यूलोज़ घास और फूलों को तो मज़बूती देते हैं, किन्तु बड़े आकार के वृक्षों को मज़बूत लकड़ी की आवश्यकता होती है। इसके लिए जैव-विकास के दौरान अल्कोहल के अणुओं से लिग्निन का निर्माण होने लगा।

मज़बूती प्रदान करने वाले सेल्यूलोज़, हेमीसेल्यूलोज़ और लिग्निन के अणुओं का पाचन बैक्टीरिया और जन्तु नहीं कर सकते। ये तीनों पदार्थ प्रकृति के पदार्थ-चक्र में बहुत धीमी गति से पिसते हैं। यही कारण है कि अणुओं की यह तिकड़ी जीवजगत में

* *बैक्टीरिया की एक किस्म जो फोटोसिन्थेसिस द्वारा ऊर्जा उत्पन्न करती है। इन्हें अक्सर ब्लू-ग्रीन एल्गी कहा जाता है।*

चित्र-1: फफूँद का प्रजनन-सम्बन्धी हिस्सा हमें दिख जाता है और कुछ फफूँद की प्रजातियों के इन्हीं हिस्सों को हम खाते हैं। लेकिन फफूँद विभिन्न किस्म की होती हैं - दीवारों की सीलन पर काले दाग, पत्तियों पर धब्बे, सड़े हुए सन्तरे पर हरी परत और अन्य कई जीवों के संक्रमण जो अक्सर सूक्ष्मदर्शी से ही साफ नज़र आते हैं।

सबसे अधिक मात्रा में पाई जाती है। बहुतायत में पाए जाने वाले इन संसाधनों का उपयोग करने का सुनहरा अवसर जैव-विकास के यात्रियों के लिए था। मगर इस अवसर का फायदा जैव-विकास के नाटक के तीन कलाकारों यानी बैक्टीरिया, वनस्पति और जन्तुओं से बिलकुल अलग एक कलाकार, यानी फफूँदों ने उठाया।

करामाती फफूँद

वनस्पतियों के समान फफूँद भी एक ही स्थान पर स्थिर रहती हैं किन्तु इनके शरीर का रासायनिक संगठन वनस्पतियों की तुलना में जन्तुओं के अधिक समान होता है। इन दोनों में जो सबसे महत्वपूर्ण समानता है वह है कायटिन नामक पदार्थ, जिसे सेल्यूलोज़ के समान ही शर्करा के अनेक अणुओं को गूँथकर बनाया जाता है। अन्तर यह होता है कि इसमें नाइट्रोजनयुक्त अणुओं को भी जोड़ा जाता है। ज़मीन पर टिके रहने में सफल कीट, बिच्छू और मकड़ी वर्ग के जन्तुओं के कवच और फफूँदों के कवच, दोनों कायटिन से बने होते हैं। इस आवरण के कारण फफूँद अपने शरीर

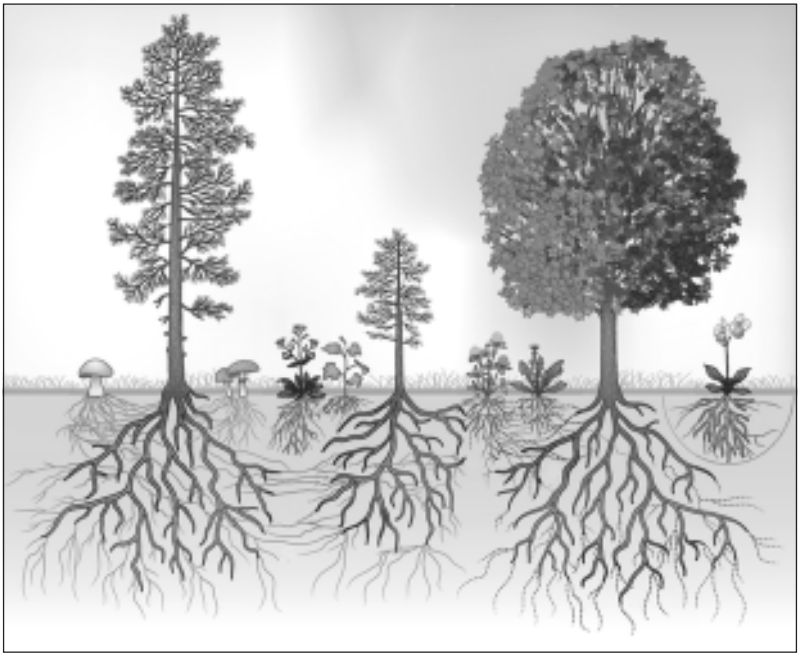

चित्र-2: सतह के नीचे अक्सर फफूँद जालनुमा फैली होती हैं। इनके महीन धागेनुमा तन्तु सूक्ष्म होते हैं। हमें सतह पर अलग-अलग पौधे-फफूँद दिखती हैं; वास्तव में इनमें से कई ज़मीन के अन्दर एक-दूसरे से जुड़ी हो सकती हैं।

के पानी को अच्छी तरह सहेज सकती हैं और बिलकुल सूखे परिवेश में भी पनप सकती हैं। फफूँदों की दूसरी विशेषता है कि वे एक ऐसा काम कर सकती हैं जो अन्य सभी जीवधारियों के लिए असम्भव है - लिग्निन का विघटन करके उसे जीवजगत के पदार्थ-चक्र में एक बार फिर से उपलब्ध करा देना।

किन्तु फफूँदों की सबसे महत्वपूर्ण करामात यह है कि वे वनस्पतियों से अनेक प्रकार का सहयोग करते हुए जीवजगत को ज़मीन पर अपने पैर मज़बूती से जमाने में मदद करती हैं। वनस्पतियों को जीवित रहने के लिए और बढ़ने के लिए पानी, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और बहुत कम मात्रा में ज़िंक, मॉलिब्डेनम जैसे खनिज तत्वों की आवश्यकता होती है। वनस्पतियों की जड़ें इन सब सामग्री को सोखने के लिए अथक प्रयास करती रहती हैं, किन्तु यह काम आसान नहीं है। प्रायः ये सामग्री बहुत कम मात्रा में मौजूद होती है और बिखरी हुई होती है। इसे

सोखने के लिए मिट्टी में दूर-दूर तक पहुँचना होता है, और यह ज़रूरी होता है कि सोखने वाली सतह काफी बड़ी हो। सोखने का काम कुशलता के साथ भी करना पड़ता है। इस काम को करने में वनस्पतियों की जड़ों की कई सीमाएँ होती हैं। जड़ों की रचना ऐसी है कि उन्हें बहुत अधिक सूक्ष्म नहीं बनाया जा सकता, और इसीलिए आकार की तुलना में उनकी बाहरी सतह सीमित होती है।

इसके विपरीत, फफूँदों के कायटिन के कड़े आवरण वाले तन्तु बहुत सूक्ष्म होते हैं। आयतन के अनुपात में उनकी सतह का क्षेत्रफल अधिक होता है। लकड़ी तथा इसी प्रकार की अन्य सामग्री, जैसे ज़मीन पर पड़ी पत्तियों आदि का विघटन करके उनमें से पोषक सामग्री को सोखने में फफूँद माहिर होती हैं। इसी कारण फफूँदों के महीन तन्तु पानी और खनिजों को सोखने में वनस्पति जड़ों से कई गुना अधिक सक्षम होते हैं। बिलकुल सूखी ज़मीन से भी फफूँदों के महीन तन्तु पानी सोख सकते हैं।

फफूँद व वनस्पतियों का रिश्ता

वनस्पति की जड़ें क्षारीय ज़मीन से फॉस्फोरस सोख ही नहीं सकतीं, किन्तु फफूँद यह काम आसानी से कर लेती हैं। हवा की नाइट्रोजन का उपयोग न वनस्पति कर सकती हैं, न फफूँद। किन्तु फफूँद ऐसे बैक्टीरिया से तालमेल कर लेती हैं जो हवा में उपस्थित

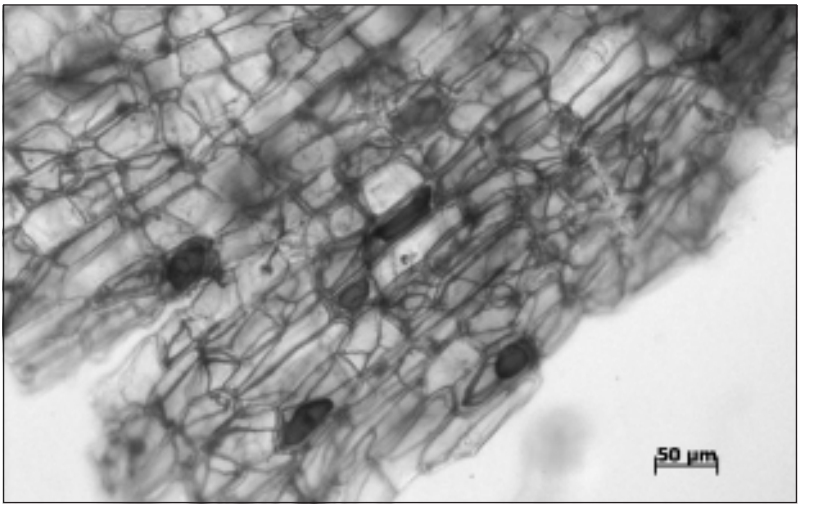

चित्र-3: कुछ फफूँद पौधे की जड़ों की कोशिकाओं के बीच ही रहती हैं। यहाँ कुछ ऐसी फफूँद दर्शाई गई हैं जो कोशिकाओं के अन्दर तक पहुँच जाती हैं।

नाइट्रोजन को कार्बनिक नाइट्रोजन में बदलने की क्षमता रखते हैं। इसके अलावा वे ज़मीन के नीचे रहने वाले कीटों का शिकार करके वनस्पतियों को कार्बनिक नाइट्रोजन उपलब्ध करा देते हैं। इन सब कामों के लिए फफूँदों को शर्करा के अणुओं की ऊर्जा की आवश्यकता होती है। पत्तियों में बनी शर्करा को वनस्पति जड़ों में भेजते ही रहते हैं। वनस्पति जड़ों के माध्यम से फफूँदों को शर्करा मिल जाती है और फफूँद वनस्पतियों को पानी और खनिज उपलब्ध करवाती हैं। यह लेन-देन दोनों के लिए फायदेमन्द होता है।

वनस्पति और फफूँद, दोनों का जन्म समुद्र के पानी में सौ-सवा सौ करोड़ वर्ष पूर्व हुआ था। किन्तु लगभग 45 करोड़ वर्ष पूर्व जीवजगत के ज़मीन पर कदम रखने के बाद ही वनस्पति आकार में बड़ी हुईं, फलने-फूलने लगीं। वनस्पतियों के साथ फफूँदों की भी उन्नति हुई। कहा जाए, तो दोनों को यह बात समझ में आ गई कि 'साथी हाथ बढ़ाना, एक अकेला थक जाएगा, मिल कर बोझ उठाना।' इसे अक्षरशः न लें। कहने का मतलब यह है कि वनस्पतियों और फफूँदों, दोनों में जीने के लिए, बढ़ने के लिए, फलने-फूलने के लिए एक-दूसरे की पूरक भूमिकाएँ लाभदायक होने के कारण बहुत धीरे-धीरे, करोड़ों वर्षों के सफर के दौरान, आपसी सहयोग की यह प्रणाली विकसित हुई।

वर्तमान में 80 प्रतिशत वनस्पतियों की जड़ें फफूँदों के साथ रह रही हैं। जैसे ही वनस्पति का सिरा ज़मीन से बाहर आता है, ज़मीन के नीचे उसकी जड़ों पर फफूँदों की वृद्धि शुरू हो जाती है और उनके महीन तन्तुओं का विशाल जाल बिछ जाता है। वनस्पति से फफूँद शर्करा लेती हैं और बदले में उन्हें पानी और खनिज देती हैं। आगे चलकर फफूँद तन्तुओं का यह जाल अलग-अलग वनस्पतियों की जड़ों को एक-दूसरे से जोड़ देता है। इस जाल के माध्यम से वनस्पति भी एक-दूसरे से पानी और खनिजों का आदान-प्रदान करते हुए अपने जीवन की डोर को और अधिक मज़बूत बनाती

सारा रैमे

चित्र-4: उत्तर अमेरिका में पाया जाने वाला फैन्थम ऑर्किड (*Cephalanthera austiniae*) जो फफूँदों के जाल के ज़रिए आसपास के पौधों से कार्बन (शर्करा) चुराता है।

हैं। ऐसे ही सहयोग के कारण ज़मीन पर जीवजगत मज़बूती से खड़ा हो सका है।

इसका मतलब यह नहीं है कि वनस्पतियों और फफूँदों का सम्बन्ध केवल दोस्ती का है। परजीवी फफूँद कई बार वनस्पतियों में रोग और मृत्यु के कारण भी बन जाती हैं। किन्तु सहयोग की तुलना में इस प्रकार का संघर्ष नगण्य है। हम जीवित हैं वनस्पतियों के कारण, और धरती पर वनस्पति पले-बढ़े फफूँदों की मदद से। हम फफूँदों को तुच्छ मानते हैं और कहते हैं, 'ये गन्दे और गलीज़ हैं'। यह एकदम गलत है। गन्दी लगने वाली इन फफूँदों ने ही सहयोग का रास्ता अपनाते हुए, उन्नति के पथ पर एक विशाल छलांग लगाई है और जीवजगत के इतिहास के नए, गौरवशाली अध्याय की बुनियाद रखी है।

माधव गाडगिल: हार्वड यूनिवर्सिटी से पीएच.डी. के बाद 1973 से 2004 तक भारतीय विज्ञान संस्थान, बेंगलूरु में पारिस्थितिक शास्त्र में शोध किया है। जैव-विकास, कॉन्ज़र्वेशन बायोलॉजी, ह्यूमन इकोलॉजी एवं नैचुरल रिसोर्स मैनेजमेंट और पारिस्थितिक इतिहास में इनकी रुचि रही है। पर्यावरण संरक्षण में इनका भारी योगदान है।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: अरविन्द गुप्ते: उच्च शिक्षा में एक लम्बे दौर तक प्राणीशास्त्र का शिक्षण देने के बाद डाइट, उज्जैन के प्राचार्य पद पर भी रहे हैं। 1997 में प्रशासन अकादमी, भोपाल से सेवानिवृत्त। एकलव्य के शैक्षणिक कार्यक्रमों से लम्बा जुड़ाव, इन्दौर में निवास।

यह लेख स्रोत फीचर्स के अंक अप्रैल, 2015 से लिया गया है जो माधव गाडगिल द्वारा जैव-विकास पर लिखे गए लेखों की सीरीज़ का एक हिस्सा है।